नियंत्रण



लहसुन के रोगों का प्रबंधन

मनप्रीत कौर[1] और **मनीष कुमार**[2]

लहसुन एक महत्वपूर्ण नकदी, मसाला एवं औषधीय फसल है, जिसका उपयोग भारतीय आहार में व्यापक रूप से किया जाता है। इसमें प्रोटीन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा विभिन्न जैव-सक्रिय तत्व पाए जाते हैं। इसकी विशिष्ट गंध और तीखे स्वाद का मुख्य कारण एलिसिन नामक यौगिक है। लहसुन का उपयोग सब्जियों, मसालों, अचार, चटनी तथा विभिन्न खाद्य उत्पादों में किया जाता है। अपने जीवाणुरोधी, प्रतिऑक्सीकारक और औषधीय गुणों के कारण इसका विशेष महत्व है। देश के अनेक राज्यों में इसकी व्यावसायिक खेती की जाती है और पर्वतीय क्षेत्रों में भी यह किसानों के लिए आय का महत्वपूर्ण स्रोत है। हालांकि, बैंगनी धब्बा, स्टेमफिलियम पत्ती झुलसा, पीला रतुआ तथा मृदुरोमिल आसिता जैसे रोग लहसुन की उत्पादकता और गुणवत्ता को प्रभावित कर सकते हैं। समय पर पहचान और समुचित रोग प्रबंधन से उत्पादन हानि को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

लहसुन भारत की प्रमुख मसाला एवं औषधीय फसलों में से एक है। इसकी खेती मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, ओडिशा और तमिलनाडु सहित अनेक राज्यों में बड़े स्तर पर की जाती है। हिमाचल प्रदेश में इसकी व्यावसायिक खेती मुख्यत: मध्यम एवं ऊंचाई वाले क्षेत्रों में की जाती है। विशेष रूप से सिरमौर जिले में लहसुन उत्पादन ने किसानों की आय में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

लहसुन सामान्यत: 5-6 माह की अवधि वाली फसल है। इसमें उपस्थित एलिसिन इसके विशिष्ट स्वाद और गंध के लिए उत्तरदायी होता है। इसके पौष्टिक और औषधीय महत्व के बावजूद इसकी खेती कई रोगों से प्रभावित होती है। इनमें बैंगनी धब्बा रोग, स्टेमफिलियम पत्ती झुलसा, पीला रतुआ और मृदुरोमिल आसिता प्रमुख हैं। इन रोगों के कारण पत्तियों की प्रकाश संश्लेषण क्षमता, कंद विकास, गुणवत्ता और कुल उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार स्वस्थ एवं लाभकारी फसल उत्पादन के लिए रोगों की सही पहचान और समय पर प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है।

बैंगनी धब्बा रोग

अनुकूल वातावरण: इस रोग का प्रकोप सामान्यत: वसंत और पतझड़ के मौसम में अधिक देखा जाता है। लंबे समय तक पत्तियों का गीला रहना रोग के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लगभग 21-30 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा 90 प्रतिशत से अधिक सापेक्ष आर्द्रता रोग के प्रसार के लिए अनुकूल मानी जाती है। रोगजनक के बीजाणु हवा, वर्षा की बूंदों तथा कृषि उपकरणों के माध्यम से एक पौधे से दूसरे पौधे और एक खेत से दूसरे खेत तक फैल सकते हैं।

लक्षण: यह रोग अल्टरनेरिया पोरी नामक कवक द्वारा होता है। प्रारंभ में पत्तियों पर छोटे, धंसे हुए, जल सिक्त अथवा हल्के पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। रोग बढ़ने पर ये धब्बे सफेद या भूरे रंग के हो जाते हैं तथा धीरे-धीरे उनका आकार बढ़ता है। बाद में धब्बों का रंग भूरा से बैंगनी हो जाता है और इनके चारों ओर पीले रंग का घेरा दिखाई देने लगता है। आर्द्र मौसम में धब्बों की सतह पर भूरे या गहरे धूसर रंग के बीजाणु दिखाई दे सकते हैं।

प्रबंधन: रोपण के लिए स्वस्थ एवं रोगमुक्त कलियों का प्रयोग करना चाहिए। रोपण से पूर्व कलियों को अनुशंसित फफूंदनाशक से उपचारित किया जा सकता है। एक ही खेत में लगातार लहसुन की खेती से बचें तथा 3-4 वर्ष का फसल चक्र अपनाएँ। पौधों के बीच उचित दूरी, खेत में बेहतर जल निकास और संतुलित सिंचाई से पत्तियों पर लंबे समय तक नमी बने रहने से बचाया जा सकता है। आवश्यकता होने पर मैंकोजेब (75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) जैसे अनुशंसित फफूंदनाशक का अनुमोदित दर से छिड़काव किया जा सकता है।



बैंगनी धब्बा रोग का प्रकोप

पीला रतुआ

अनुकूल वातावरण: लगभग 15-20 डिग्री सेल्सियस तापमान और अधिक सापेक्ष आर्द्रता रोग के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मानी जाती हैं। इसके बीजाणु हवा और वर्षा की बूंदों के माध्यम से फैलते हैं तथा संक्रमित पौध अवशेष भी रोग के स्रोत बन सकते हैं।

लक्षण: यह रोग पक्सीनिया एलाई नामक कवक द्वारा होता है। प्रारंभ में पत्तियों

[1]चौ.स.कु.हि.प्र.कृ.वि., कृषि विज्ञान केंद्र, बिलासपुर स्थित बरठीं, हिमाचल प्रदेश, [2]महाराणा प्रताप उद्यान विश्वविद्यालय, करनाल, हरियाणा



पीला रतुआ रोग का प्रभाव

पर छोटे लाल, पीले अथवा संतरी रंग के गोलाकार या अंडाकार धब्बे दिखाई देते हैं। रोग बढ़ने पर इनका रंग गहरा हो जाता है। अधिक संक्रमण की स्थिति में पत्तियाँ पीली पड़कर समय से पहले सूखने लगती हैं।

प्रबंधन: रोपण के लिए स्वस्थ एवं रोगमुक्त कलियों का उपयोग करें। खेत में उचित जल निकास बनाए रखें तथा पौधों के बीच पर्याप्त दूरी रखें, जिससे वायु संचार अच्छा बना रहे और आर्द्रता कम हो। 3-4 वर्ष का फसल चक्र अपनाएँ। ड्रिप सिंचाई को प्राथमिकता दें और पत्तियों पर सीधे पानी पड़ने से बचाएँ। सिंचाई सुबह के समय करना उपयुक्त रहता है, जिससे पत्तियाँ दिन में सूख सकें। आवश्यकता होने पर अनुशंसित फफूंदनाशक का अनुमोदित दर से छिड़काव करना चाहिए।

मृदुरोमिल आसिता

अनुकूल वातावरण: यह रोग ठंडे एवं अधिक आर्द्र वातावरण में तेजी से विकसित होता है। रात के समय अधिक नमी, पत्तियों पर ओस तथा लंबे समय तक पत्तियों का गीला रहना संक्रमण को बढ़ावा देता है।

लक्षण: यह रोग पेरोनोस्पोरा डिस्ट्रक्टर नामक रोगजनक द्वारा होता है। प्रारंभिक लक्षण पत्तियों पर हल्के हरे से पीले रंग के लंबे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। अधिक आर्द्रता वाली परिस्थितियों में संक्रमित भागों पर धूसर से बैंगनी रंग की कवकीय वृद्धि दिखाई दे सकती है। रोग बढ़ने पर पत्तियाँ पीली पड़कर झुकने और सूखने लगती हैं।



मृदुरोमिल आसिता रोग का संक्रमण

प्रबंधन: खेत और आसपास के क्षेत्र को खरपतवारों तथा संक्रमित पौध अवशेषों से मुक्त रखें। रोपण के लिए स्वस्थ एवं रोगमुक्त कलियों का चयन करें तथा 3-4 वर्ष का फसलचक्र अपनाएँ। खेत में उचित वायु संचार और जल निकास सुनिश्चित करें।

रोग के लक्षण दिखाई देने पर मेटालैक्सिल + मैंकोजेब जैसे अनुशंसित फफूंदनाशक का अनुमोदित दर से छिड़काव किया जा सकता है। आवश्यकता के अनुसार 10-15 दिनों के अंतराल पर पुन: छिड़काव किया जा सकता है।

स्टेमफिलियम पत्ती झुलसा रोग

अनुकूल वातावरण: यह रोग लगभग 18-25 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा अधिक आर्द्रता वाली परिस्थितियों में तेजी से फैलता है।

लक्षण: यह रोग स्टेमफिलियम वेसिकेरियम नामक कवक द्वारा होता है। प्रारंभ में पत्तियों पर छोटे, हल्के पीले से भूरे रंग के जलासिक्त धब्बे दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े हो जाते हैं, जिससे पत्तियों का व्यापक भाग झुलसने लगता है। बाद में धब्बे गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं और गंभीर संक्रमण की स्थिति में पत्तियाँ समय से पहले सूख सकती हैं।

प्रबंधन: रोगमुक्त रोपण सामग्री का उपयोग करना चाहिए। संक्रमित फसल अवशेषों को खेत से हटाकर नष्ट करें अथवा मिट्टी में गहराई से दबाएँ। सिंचाई इस प्रकार करें कि पत्तियों पर लंबे समय तक नमी न रहे। 3-4 वर्ष का फसल चक्र अपनाना भी उपयोगी है। रोग की स्थिति में अनुशंसित फफूंदनाशक, जैसे मैंकोजेब (75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.), का अनुमोदित दर से छिड़काव किया जा सकता है तथा आवश्यकता के अनुसार 10-15 दिनों के अंतराल पर पुन: छिड़काव किया जा सकता है।



स्टेमफिलियम पत्ती झुलसा रोग



उन्नत तकनीक स्वस्थ उपज